International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
ISSN -2393-8048, January-June 2020, Submitted in February 2020, iajesm2014@gmail.com

# 'हरिवंशराय बच्चन' को श्रद्धांजलि

दीप्ति कुमारी, रिसर्च स्कॉलर, हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय

## सारांश

उन्नीसवीं सदी का महान कवि/लेखक/विचारक जो आधी सदी से भी अधिक समय तक आधुनिक साहित्य जगत में देदीप्यमान नक्षत्र ध्रुव तारे के समान चमका और दिन-प्रतिदिन उज्जवलता की ओर बढ़ता गया।

गेहुँआ रंग लिए, लम्बे घुँघराले वालों वाला, चिंतकों व दार्शनिकों सी गम्भीरता, मधुर सौम्य मुस्कान, कहानीनुमा आँखें, उस पर मोटे फ्रेम का चश्मा जिनके चेहरे पर रहता था उन्हीं का नाम था हरिवंशराय बच्चन। स्वभाव से कोमल, उदार, शालीन, व्यवहारिक तथा कुशल एवं भावुक। कवि की यही भावुकता मधुशाला में छलक पड़ती है। कवि कह उठता है –

**भावुकता अँगूर लता से, खींच कल्पना की हाला,**
**कवि साकी बनकर आया है भरकर कविता का प्याला,**
**कभी न कण भर खाली होगा, लाख पिएँ, दो लाख पिएँ।**
**पाठकगण है पीने वाले, पुस्तक मेरी मधुशाला।**

मधुशाला की विदग्धता ने लोकप्रियता के क्षेत्र में अद्भुत कीर्तिमान स्थापित किया, यह मील का पत्थर बनी। कवि की प्रसिद्धि की चरम सीमा बन कर साहित्य जगत में अवतरित हुई। सन् 1933-34 में बच्चन जी ने मधुशाला की रूबाइयाँ लिखी थी और दिसम्बर सन् 33 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के बड़े कवि सम्मेलन में महान् दिग्गज एवं ख्यातिमान् कवियों के सामने बच्चन जी ने मधुशाला के दो पद पढ़े तो श्रोतागण झूमने लगे, हजारों कंठ सुर-ताल मिलाने लगे। कोई लिख रहा था, कोई झूम रहा था, कोई गुनगुना रहा था, कोई हतप्रभ था, कोई आँख बंद किए हुए आनंदित हो रहा था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे लोक-परलोक सारा सिमट गया इसी एक क्षितिज में।

आर्थिक तंगी के कारण मधुशाला की छपाई के खर्चे के लिए कवि साहस नहीं जुटा पा रहा था। परंतु प्रेस मालिक को जब बच्चन जी ने कुछ ही रूबाईयाँ पढ़कर सुनाई तो जवाब मिला कि पाँडुलिपि यहीं छोड़ जाइए प्रेस मालिक ने 1000 प्रतियाँ निकालीं। प्रेस से प्रतियाँ निकलते ही निकलते हाथों हाथ बिक गई। तब प्रेस का मालिक बीस कापियों का बण्डल हाथ में लिए बच्चन जी के घर जा पहुँचा और बताया कि 1000 प्रतियों में से यही बची है। उस बिक्री से जो रुपया मिला उसी में से छपाई का खर्चा निकाल लिया बाकी आपकी सेवा में प्रस्तुत है। यह थी बच्चन जी के संघर्षमय जीवन की शुरूआत।

कवि ने अपनी सबसे पहले रचना सातवीं कक्षा में किसी अध्यापक की विदा-बेला के अवसर पर लिखी थी –

**'दीन जनों के पास नहीं है**
**मणि मुक्ता के सुन्दर हार।'**

अंतिम पंक्ति –

**'इसीलिए हम इनमें अपना**
**हृदय गंध कर देते है।**
**इनमें यानि फूल मालाओं में।'**

मैंने इस शोध लेख में हरिवंशराय बच्चन जी की उपलब्धियाँ और अनूठापन बताने का प्रयास किया गया है।

**शब्द कूंची:** बच्चन का व्यक्तित्व एवं कृतित्व, उपलब्धियाँ, प्रासंगिकता

## प्रस्तावना

डॉ. बच्चन का जन्म इलाहाबाद के मध्यम वर्गीय परिवार में 27 नवम्बर 1907 को हुआ था। यह युग हिन्दी साहित्य के इतिहास में द्विवेदी युग अथवा पूर्व छायावादी युग के नाम से जाना जाता है। यही काल नवीन हिन्दी खड़ी बोली की कविता के जन्म और विकास का काल भी है।

इस काल में नवप्राण फूँकने वाले डॉ- बच्चन के पिता प्रतापनारायण जी ने पुत्र रत्न की प्राप्ति के लिए अपने परिवारी पुरोहित पं- रामचरण शुक्ल के परामर्श पर अपनी पत्नी के गर्भ में सन्तान आने पर हरिवंशपुराण सुना। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि बच्चन से पूर्व उनकी एकमात्र बहिन भगवानदेई ही जीवित थी परंतु अन्य चार बच्चे अल्पायु में ही काल के ग्रास हो गए थे। बच्चन जी अपने पिता की छठीं सन्तान के रूप में पैदा हुए। इनके जन्म पर पैसा ऐंठने की दृष्टि से बताया गया कि वे मूल नक्षत्र में पैदा हुए है अतः दान-अनुष्ठानादि की बात चली। पं- शुक्ल जी ने कथा सुनाने और जाप कराने की दक्षिणा के रूप में उस समय में 1001 रुपया माँगा। पिता के पास इतनी बड़ी धनराशि दान में देने के लिए नहीं थी। इसलिए यज्ञादि अनुष्ठान की समाप्ति पर उन्होंने एक कागज के पुर्जे पर धनराशि लिखकर पुरोहित को समर्पित कर दी और प्रतिमास दस रुपया देते हुए जब तक बच्चन नौ वर्ष के हुए तब कहीं पिता इस संकल्प ऋण से उऋण हुए। इसी परिवेश के कारण बच्चन जी का व्यक्तित्व किसी भी प्रकार की रूढ़ि, परम्परा, अन्धानुकरण, अंधविश्वासों का पिछलग्गू नहीं रहा है। इसीलिए वह धर्म ग्रंथों को स्वाहा कर, मंदिर मस्जिद का परित्याग कर, पंडित, मौलवी, पादरियों के बन्धनों को काटने की बात करता है। उनमें कबीर सी फक्कड़ता, मीरा-सी दीवानगी, गुप्त की सरलता व सहजता, महादेवी की गीतात्मकता, एक साथ मिलती है। कवि ने कह डाला -

**'मुसलमान 'औ' हिन्दू हैं दो, एक मगर उनका प्याला,**
**एक मगर उनका मदिरालय, एक मगर उनकी हाला**
**दोनों रहते एक न जब तक मस्जिद-मंदिर में जाते,**
**बैर बढ़ाते मस्जिद-मंदिर, मेल कराती मधुशाला।'**

यह 'मधुशाला' सांप्रदायिकता से ऊपर उठकर मन मंदिर के द्वार खोलती है। लोक परलोक के धरातल पर मानव मात्र को एक कर नया संदेश प्रदान करती है। जो रास्ता मेल मिलाप, सद्भावना की ओर जाता है। स्वयं कवि 'आत्म परिचय' देते हुए कहता है -

**'मैं रोया, इसको तुम कहते हो गाना,**
**मैं फूट पड़ा, तुम कहते छंद बनाना,**
**क्यों कवि कहकर संसार मुझे अपनाए,**
**मैं दुनिया का हूँ एक नया दीवाना।'**

बच्चन जी का हिन्दी साहित्य में प्रवेश के साथ, यदि एक ओर लोकप्रियता उनके चरण छूने को बेताब थी तो दूसरी ओर घनघोर विरोध हुआ, यह कहकर कि यह तो मद्यमय है, हाला प्याला की बात करता है। साहित्य के देवालय में, सरस्वती के मंदिर में इस प्रकार का व्यक्तित्व सर्वथा अवांछनीय माना गया है। परंतु फिर भी यह जानते हुए थी कि मस्त, मादक, रसिक, वक्रगति गामी, इस संसार में भला नहीं बुरा ही कहा गया है वह विश्व विजय की कामना करता हुआ अविराम कदमों से निरंतर बिना रूके आगे बढ़ता ही गया।

बच्चन जी का व्यक्तित्व अविराम प्रवाहित होता हुआ, 'तेरा हार' से प्रारंभ होकर 'मधुशाला', 'मधुबाला', 'मधुकलश' के रथ पर सवार 'विश्व निमंत्रण' देता हुआ 'एकान्त संगीत' के साथ अपने 'आकुल अन्तर' की वाणी को अभिव्यक्त करते हुए कवि स्वयं 'मधुकलश' में पूरा खुलासा कर देता है -

**'शत्रु मेरा बन गया है, छल रहित व्यवहार मेरा।**
**कह रहा जग वासनामय हो रहा उद्गार मेरा।'**

कवि स्वयं का परिचय भी देता है और भावविभोर करते हुए 'मधुबाला' में वास्तविक भूमि पर ले आता है -

**'अधिकार नहीं जिन बातों पर, उन बातों की चिन्ता करके**
**अब तक जग ने बचा पाया है, मैं कर चर्चा, क्या पाऊँगा?**
**मुझको अपना ही जन्म निधन, है सृष्टि प्रथम, हैं अंतिम लय,**
**मिट्टी का तन, मस्ती का मन, क्षण भर जीवन मेरा परिचय।'**

तदुपरांत कवि बच्चन जी 'बंगाल के काल' से क्षुब्ध होकर 'सूत की माला' में 'खादी

के फूल' गूँथता है जो 'मिलन यामिनी' के किनारे पर 'प्राण पत्रिका' लिखते हुए 'धार के इधर उधर' देखता है, यह चिंतन के रूप में 'बुद्ध और नाचघर' में दार्शनिक चिंतन बन उभरता है। जो 'चार खेमे और चौसठ खूँटे' का साथ ग्रहण कर 'दो चट्टानों पर' दृढ़तापूर्वक कदम बढ़ाता है तथा 'बहुत दिन बीते' के माध्यम से 'उभरते प्रतिमानों' के रूप में परोसता है। यह बच्चन चार खेमे – चम्पा, श्यामा, रानी तथा आइरिस के सान्निध्य से घिरा हुआ था। बच्चन जी की 'वेदना' को पहली पत्नी 'श्यामा' ने इन्हें सफरिंग नाम भी दिया। 'चम्पा' के रूप सौंदर्य की छाया में बैठकर ही कवि ने 'मधुशाला' जैसी लोकप्रिय कृति का प्रणयन किया तो रानी ही वह 'मधुबाला' थी जो अपने सिर पर 'मधुकलश' लेकर पाठकों के समक्ष उपस्थित हुई। प्रत्येक के सम्पर्क संघर्ष के बाद भी कवि ने 'मधु' ही वितरित किया और हलाहल भी बाँटा। इसलिए कहते है –

**'मैं अभी जिन्दा**
**अभी यह शव-परीक्षा,**
**मैं तुम्हें करने न दूँगा।'**

'केदारनाथ अग्रवाल' जी के शब्दों में बच्चन में एक साथ सात बच्चनों के दर्शन होते हैं – वे हैं – देह के बच्चन (यह मध्यम वर्ग की जमीन में पनपा बच्चन है), मन के बच्चन (यह अभिन्न अंतरंग तथा आत्मीय है), समाज के बच्चन (अच्छा साथी, सामाजिक है) सभ्यता और संस्कृति के बच्चन, सरकार के बच्चन, जनता के बच्चन, काव्य के बच्चन है। सरकार का बच्चन बिका नहीं, जनता के साथ जीने की राह तलाशता है और कवि मार्ग से कविता के माध्यम से अपनी स्पष्टवादी वाणी से ढोंगी साधु होने से तो दिगम्बर रसिक होना स्वीकार करते हुए अधिक पसंद करता है –

**'मैं छिपाना जानता तो, जग मुझे साधु समझता,**
**शत्रु मुझको बन गया है, छल रहित व्यवहार मेरा।'**

बच्चन वस्तुतः रसवादी कवि है उनकी कविता के माध्यम से मानव मन की गाँठें खुलती हैं –

**'नीरस को रसमय कर देना, हो मेरी रसना का साका**
**कवि हूँ, जो सब मौन भोगते जीते, मैं मुखरित करता हूँ,**
**मेरी उलझन में दुनियाँ सुलझा करती है**
**एक गाँठ, जो बैठ अकेले खोली जाती,**
**उससे सबके मन की गाँठें, खुल जाती है।'**

अत्यन्त संघर्षमय जीवन के कारण बच्चन जी का संपर्क क्षेत्र बहुत विस्तृत एवं व्यापक रहा है। सर्वप्रथम बच्चन जी को 'चांद' कार्यालय के सम्पादन विभाग में कार्य करने का अवसर मिला। वेतन मात्र चालीस रुपया। उस चालीस रुपए के लिए भी प्रेस के चालीसों चक्कर लगाने पड़ते थे। इसके बाद इलाहाबाद राष्ट्रीय स्कूल में उन्हें अध्यापक की नियुक्ति मिली। बाद में यह नौकरी भी छूट गई। तब पायनियर में संवाददाता की नौकरी की। दिसम्बर 1955 में भारत सरकार ने उन्हें विदेश मंत्रलय के हिन्दी विशेषज्ञ के रूप में नियुक्त किया। हिन्दी को सरकारी कामकाज की भाषा बनाने का श्रेय बच्चन जो को ही है। 1966 में इन्हें राज्यसभा के सदस्य के रूप में मनोनीत किया गया। सन् 1972 में फिर से राज्यसभा के लिए मनोनीत किया गया। इसी संपूर्ण यात्रा के कारण बच्चन जी निराला, पंत, महादेवी, माखनलाल चतुर्वेदी, रामकुमार वर्मा, रामधारी सिंह दिनकर, अज्ञेय, जैसी कवियों समीक्षकों से ही नहीं अपितु कुलपतियों, समाजशास्त्रियों, भाषाशास्त्रियों, राजनेताओं तक से संपर्क में रहे है और अपनी अमिट छाप छोड़ी है।

सन् 1966 में बच्चन जी को 'चौसठ रूसी कविताएँ' अनुवाद पर सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार विजेता के रूप में रूस की यात्रा करने का अवसर भी मिला। आपने शिक्षा मंत्रालय की ओर से रूस, मंगोलिया, पूर्वी जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया की यात्रा सन् 1967 में की। सन् 1969 में 'दो चट्टानें' काव्य संग्रह पर साहित्य अकादमी पुरस्कार से अलंकृत किया गया। 1969 में ही दिल्ली प्रशासन साहित्य कला परिषद् द्वारा सम्मानित और पुरस्कार किया गया। 1970 में अफ्रो एशियन

राइटर्स कान्फ्रेंस द्वारा लोट्स पुरस्कार प्रदान किया गया। आपको हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित सरस्वती सम्मान तथा पद्म भूषण से भी भूषित किया गया।

बच्चन जी के चरित्र में सदैव आत्मोन्नयन एवं आत्म प्रसार के लिए एक सशक्त परिदृश्य एवं अंर्तभावना विद्यमान रही है इसलिए वह कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी बिना थके निरंतर जूझता हुआ - सीढ़ी दर सीढ़ी आगे बढ़ता रहा है।

'नीरज' के शब्दों में - 'बच्चन हिन्दी के ऐसे कवि है जिन्होंने खुद कविता नहीं लिखी बल्कि कविता ने स्वयं ही जिन्हें लिखा है।' बच्चन कोर्स के किताबी कवि नहीं है। वे लोकप्रिय कवि है। उसकी कविता मन की वस्तु है जो अपने आप में विलक्षण व विदग्ध है। उनकी भाषा में भी मन की भाषा की अद्‌भुत मिठास व ताजगी है -

**सुन कलकल, छलछल मधु - घट से गिरती प्यालों में हाला,**
**सुन, सनझुन, सनझुन चल, वितरण करती मधु साकी बाला**
**बस आ पहुँचे, दूर नहीं कुछ, चार कदम अब चलना है,**
**चहक रहे, सुन, पीने वाले, महक रही, ले, मधुशाला!**

'अग्निपथ' के माध्यम से डॉ- बच्चन व्यक्ति को निरंतर संघर्षों से जूझने व आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं -

**तू न थकेगा कभी, तू न थमेगा कभी,**
**तू न मुड़ेगा कभी, कर शपथ, कर शपथ, कर शपथ।**

न बिकने वाला बच्चन 'मधुबाला' से ही प्रगट होने लगा था -

**'मुझको न ले सके धन कुबेर, दिखलाकर अपना ठाठ बाट,**
**मुझको न सके ले नृपति मोल, दे माल खजाना राज पाट।'**
**अमरों ने अमृत दिखलाया, दिखलाया अपना अमर लोक,**
**ठुकराया मैंने दोनों को, रखकर अपना उन्नत ललाट,**
**बिक मगर गया, मैं मोल बिना, जब आया मानव सरस हृदय।'**

जीवन की क्षणभुंगरता को भी वे भलीभाँति जानते थे, इसलिए मस्तीपूर्वक जीवन जिया। बच्चन जी ने कहीं-कहीं सीधे सरल शब्दों में बहुत बड़े गहन गम्भीर मार्मिक एवं संवेदनाओं को अभिव्यंजित करते दिखाई देते हैं क्योंकि कारयित्रि प्रतिभा जो बच्चन में है उसके कारण कविताएँ अधिक मर्मस्पर्शी बन पड़ी है -

**दृग देख जहाँ तक पाते हैं, तम का सागर लहराता है**
**फिर भी उस पार खड़ा कोई, हम सबको खींच बुलाता है।**

यहीं नहीं कहीं लोकधुन की मधुरिमा लिए मधुर लोकगीतों को भी बच्चन ने अनूठे अंदाज में स्पर्श किया है। उत्तरप्रदेश की छवि में एक मल्लाह का चित्रण करते हुए कहते हैं -

**डोंगा डोले, नित गंग जमुन के तीर**
**डोंगा डोले**

× ×

**इस तट, उस तट, पनघट, मरघट, बानी अटपट,**
**हाय, किसी ने कभी न जानी माँझी - मन की पीर।**
**डोंगा डोले, नित गंग जमुन के तीर -------**

इसी प्रकार बीकानेरी मजदूरिनियों से सुनी एक लोकधुन के आधार पर 'मालिन बीकानेर की' लोकगीत में बच्चन ने अनुपम चित्र सींचा है -

**फुलमाला ले लो,**
**लाई है मालिन बीकानेर की, मालिन बीकानेर की।**
**एक टका धागे की कीमत, पाँच टके है फूल की,**
**तुमने मेरी कीमत पूछी? - भोले तुमने भूल की।**
**लाख टके की बोली मेरी! - दुनिया है अंधेर की।**
**लाई है मालिन बीकानेर की, मालिन बीकानेर की।**

'नारी' के बारे में बच्चन जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि वह चाहे उन्हें दुख दे या सुख, चाहे विचलित करे, चाहे शक्ति दे, चाहे वह समस्या बने, चाहे समाधान परंतु वह उनके जीवन का आवश्यक अंग बन चुकी थी। बच्चन जी ने चार खंडों में अपनी आत्मकथा लिखी है - ये चार खंड है - 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ', 'नीड़ का निर्माण फिर', 'बसेरे से दूर' और 'दशद्धार से सोपान तक'। 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' में वे कहते हैं -

'मैं उसे खोजने नहीं गया था, वही किसी संयोग, किसी घटना, किसी विधान से मेरे समीप आ गई थी। जब वह मेरे समीप रहती थी, मुझे तन मन से 'आकूपाइड़' संलग्न रखती थी, जब मुझ से वह दूर हो गई थी, एक खालीपन, एक शून्यता मुझे खाती रहती थी।' तभी तो बच्चन कह सके -

**'शून्यता एकान्त मन की, शून्यता जैसे गगन की**
**थाह पाती है न इसका मृत्तिका असहाय।**
**मिट्टी दीन कितनी हाय।'**

वे प्रेम की दो रस सिक्त बूँदों पर अपने को बलिहार करते रहे है -

**'तुम हृदय का द्वार खोलो,**
**और जिह्वा, कंठ तालु के नाहीं,**
**तुम प्राण के दो बोल बोलो'**

बच्चन में 'उस पार' के सुख के प्रति ललक नहीं संशय है, जिज्ञासा है -

**'इस पार प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा?**
**तुम देकर मदिरा के प्याले, मेरा मन बहला देती हो,**
**उस पार मुझे बहलाने का, उपचार न जाने क्या होगा -**
**इस पार प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा?'**

यही नहीं वह तो 'उस पार' के आनन्द को, सुख को इस पार लाने के लिए भी प्रयत्नशील दिखाई देते हैं -

**'दूर की इस कल्पना के पार जाना चाहता हूँ।**
**कुछ विभा उस पार की इस पार लाना चाहता हूँ।'**

इसीलिए बच्चन जी के स्वाधीनोत्तर काव्य में लोक जीवन के ऐसे निर्माणशीला स्वरूप की परिकल्पना की गई है जो स्वर्ग से भी अधिक ऊँचा हो -

**'एक पीर ऐसी अपनाऊँ, भूमि लगे स्वर्गों से प्यारी!**
**एक गीत ऐसा मैं गाऊँ, भूमि लगे स्वर्गों से प्यारी!'**

'दो चट्टानें' में श्रमिकों की श्रम की गाथा भी बच्चन जी ने खूब समझी है और गाई है इसलिए श्रमिक का करुण-क्रंदन उसमें स्पष्ट सुनाई पड़ता है -

**'यह मासूम खून किनका है?**
**क्या उनका?**
**जो अपने श्रम से धूप में, ताप में**
**धूलि में, धुएँ में सनकर, काले होकर**
**अपने सफेद खून स्वामियों के लिए**
**साफ घर, साफ नगर, स्वच्छ पथ**
**उठाते रहे, बनाते रहे,**
**पर उन पर पाँव रखने, उनमें पैठने का**
**मूल्य अपने प्राणों से चुकाते रहे।'**

'बुद्ध और नाचघर' में 'बुद्धं सरणं गच्छामि', 'धम्मं सरणं गच्छामि', 'संघ क्षरणं गच्छामि' को आधुनिक सभ्यता के समकक्ष चित्रित करते हुए कहते हैं -

**'शुरू हो गई है बात, शुरू हो गया है नाच,**
**आर्केस्ट्रा के साज - ट्रम्पेट, क्लरिनेट, कारनेट-पर साथ**
**बज उठा है जाज, निकलती है आवाज -**
**'मद्यं सरणं गच्छामि,**

**मासं सरणं गच्छामि,**
**डांसं सरणं गच्छामि।'**

महाबलिपुरम की यात्रा पर कवि अतीत की स्मृतियों में विलीन होकर, मधुर कल्पनालोक के माध्यम से, मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश को महाबलिपुरम के चित्रों में खोजता दिखाई पड़ता है –

**'मैं कटे, बिखरे हुए पाषाण खंडों को, उठाकर देखता हूँ –**
**अरे यह तो हलाहल, सतरंगिनी यह-देखता हूँ,**
**वह निशा-संगीत, ----- खेमे चार खूँटे-**
**क्या अजीब त्रिभंगिमा, इस भंगिमा में!**
**आरती उलटी, अंगारे दूर छिटके-**
**यहाँ मधुबाला विलुंठित-**
**धराशायी वहाँ मधुशाला कि चट्टानें पड़ी दो –**
**आँख से कम सूझता अब –**
**उस तरफ मधुकलश लुढ़के पड़े रीते-**
**तुम बिन जिऊत बहुत दिन बीते।'**

अंततः कहा जा सकता है कि बच्चन का व्यक्तित्व निश्छल और निष्कपट था। वे क्या भावना रखते है यह स्पष्ट उनके चेहरे पर पढ़ा जा सकता था। आधुनिक छल कपट उन्हें छू तक नहीं गया था। इसलिए बच्चन बड़े स्पष्ट शब्दों में कह उठते हैं –

**'मैं आज चला, तुम आओगी, कल परसों, सब संगी साथी,**
**दुनिया रोती-धोती रहती, जिसको जाना है, जाता है,**
**मेरा तो होता मन डग-मग, तट पर के ही हलकोरों से,**
**जब मैं एकाकी पहुँचूंगा, मझधार न जाने क्या होगा।'**

## निष्कर्ष

बच्चन का काव्य ऐसा सरल, सहज, मधुर, रससिद्ध, मर्मस्पर्शी, काव्य है जहाँ जीवन काव्य के समकक्ष है तो काव्य के समकक्ष जीवन। जिसमें अपने पराए का भेद नहीं। जीवन और काव्य एक साथ मिलकर नई भावभूमि पर जन्म लेता है जो निजी स्वं, अहं से परे हैं तब भी वह समष्टिमूलक है। यही उसकी विशेषता है कि वह व्यष्टिमूलक होते हुए भी समष्टि की ओर निंरतर प्रवाहित होता है यही उसकी समरसता है। ऐसे काव्य के प्रणेता के रूप में अमर रहने वाले हरिश्वंशराय बच्चन जन-जन के कवि कहलाते हैं। ऐसा महान् कवि 20 जनवरी 2003 को अखंडता में समा गया। जन-जन के कवि रूप में याद किए जाने वाले बच्चन जी के प्रति यही हमारी सच्ची श्रद्धांजलि है।

ऐसा प्रतीत होता है जैसे हरिश्वंशराय बच्चन आज भी कह रहे हैं –

**''मेरे अधरों पर हो अन्तिम, वस्तु न तुलसी दल, प्याला**
**मेरी जिह्वा पर हो अन्तिम, वस्तु न गंगा जल हाला**
**मेरे शव के पीछे चलने, वालों याद इसे रखना –**
**'राम नाम है सत्य' न कहना, कहना 'सच्ची मधुशाला'।''**

## संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हरिश्वंशराय बच्चन – मधुशाला
2. हरिश्वंशराय बच्चन आत्मकथाएँ –
   दशद्वार से सोपान तक, क्या भूलूँ क्या याद करूँ
   बसेरे से दूर, नीड़ का निर्माण फिर।